RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-12
December -2019
ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[Peer Reviewed Journal]

सामाजिक विसंगतियों के संदर्भ में विभूति नारायण की लेखन दृष्टि

सुधीर सैनी

शोधार्थी, हिन्दी विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 16 Dec 2019

Keywords
दृष्टि, साहित्यकार, युग, लक्ष्य, शत्रु, मुक्ति पात्र, शोषण।

ABSTRACT

राय जी का जीवन दर्शन मानवतावादी है। उनका मानवतावाद सच्चे अर्थों में मनुष्यत्व का समर्थन करने वाला मानवतावाद है। राय जी हिन्दू–मुसलमान वैमनस्य के विरोधी है। उन्होंने शहर में कर्फ्यू उपन्यास में यह दर्शाया है कि–"धर्म की आड़ लेकर उच्च वर्ग के लोग दंगे करवाते है। जिसमें मध्यमवर्ग के लोग मारे जाते है। उनकी मान्यता यह है कि 'कर्तव्य क्षेत्र में हिन्दू और मुसलमान का भेद नहीं, दोनों एक ही नाव में बैठे हुए है, डूबेंगे तो दोनों डूबेंगे, बचेंगे तो दोनों बचेंगे। राय जी की दृष्टि में धर्म का अर्थ कर्तव्य है। सच्चा धार्मिक वहीं है जो कर्तव्य का पालन करता है।" राय जी का लक्ष्य समाज कल्याण या लोक मंगल की भावना है। उनकी मान्यता है कि समाज का कल्याण होने से सभी व्यक्तियों का कल्याण स्वयं ही हो जाता है। उनके सभी आदर्शवादी पात्र समाज के उन्नयन के लिए प्रयत्नशील दिखाई देते है। राय जी देख रहे कि समाज में बहुत बड़ी विषमता है। उच्च वर्ग निम्न वर्ग को उपेक्षित समझता है और उनका शोषण करता है। राय जी ने इसलिए सर्वहारा वर्ग के शोषित और पीड़ित व्यक्तियों को अपने हृदय में पूर्ण सहानुभूति दी।

प्रत्येक साहित्यकार विशिष्ट दृष्टि से जीवन को देखता है और उसी के अनुसार अपनी रचनाओं में जीवन की व्याख्या एवं आलोचना करता है। जीवन को विशिष्ट दृष्टि से देखना ही साहित्यकार का जीवन दर्शन कहलाता है पर साहित्यकार अपने युग के वातावरण और स्थितियों से प्रभावित होता हैं और ये स्थितियां उसके जीवन दर्शन को भी प्रभावित करती रहती है।[1]

डॉ. कृष्ण चन्द्र पाण्डेय ने लिखा है–"किसी साहित्यकार का जीवन दर्शन, उसके जीवन संबंधी दृष्टिकोण को कहते है जिसे वह अपने वंशानुक्रम प्रभाव, संस्कार, संस्कृति, अपने चारों तरफ के वातावरण, जीवन की प्रमुख घटनाओं, शिक्षा, अध्ययन, अनुभव और चिन्तन के आधार पर बनाता है और ज्यों–ज्यों वह जीवन और समाज से अधिकाधिक रूप में परिचित होता जाता है वह अपने जीवन दर्शन को परिवर्धित और परिमार्जित करता हुआ विकसित करता है। यहीं साहित्यकार की सफलता है और जो एक ही जीवन दृष्टि को अपनाकर उसे पकड़कर बैठ जाता है, वह शीघ्र ही विकास की दृष्टि से प्राचीन पड़ जाता है। युग से पीछे टूट जाता है।" ये ही राय जी के जीवन दर्शन के विधायक तत्व है और इस प्रकार इन सबके प्रभाव से राय जी का जीवन दर्शन उत्रोत्तर विकसित हुआ है।[2]

राय जी की दृष्टि में जीवन का लक्ष्य खाना–पीना और धन संचय करके मर जाना नहीं है। उनकी दृष्टि में जीवन का उद्देश्य कर्म है। भोग विलास और वासना मानव के सबसे बड़े शत्रु है। मनुष्य की मुक्ति सेवामार्ग के द्वारा ही सम्भव है। सेवा का महत्व प्रतिपादित करते हुए उन्होंने कहा–सच्चा आनन्द, सच्ची शान्ति केवल सेवाव्रत में है। वहीं अधिकार का स्रोत है, वहीं शक्ति का उद्‌गम है।

राय जी शोषण के घोर विरोधी है। उच्च वर्ग के लोग मौका पाते ही शहर में दंगे करवाते है। राजनीति में घुसने के लिए कई नेताओं का मर्डर करवाते है तथा गरीबों का शोषण करने लगते। ये उच्च वर्ग के लोग धर्म की आड़ में गरीबों का शोषण करते रहते। राय जी का लक्ष्य था कि वह इस तरह के उपन्यास लिखकर लोगों का ध्यान आकर्षित करें और जनता का विकास करें।[3]

राय जी ने वर्तमान युग में स्त्रियों पर होने वाले अत्याचार पर भी प्रकाश डाला है। स्त्रियों का सबसे जबरदस्त शोषण समाज की दुहरी नीति के द्वारा हो रहा है। राय जी ने इस शोषण को देखा और उससे होने वाली पीड़ा का अनुभव करते ही उनके मन में स्त्री समाज के प्रति सहानुभूति जाग उठी। राय जी समाज में निहित स्त्री संबंधी कुप्रथाओं का विरोध करना चाहते है। साथ ही महिलाओं पर दिन प्रतिदिन बलात्कार जैसी घटनाऐं बढ़ती जा रही है उसको भी चित्रित करने का प्रयास किया है।

लेखक अपने साहित्य में विविध गतिविधियों को संचालित करता है, लेखक का जीवन दर्शन, सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक एवं आर्थिक संदर्भों से जुड़ा हुआ चलता है। सामाजिक क्षेत्र में जहां उन्होंने सामाजिक विषमताओं को दूर करके एक नव्य समाज की स्थापना का स्वप्न देखा वहां धार्मिक क्षेत्र में धर्म के ऐसे रूप की परिकल्पना की जो बाह्मयाडम्बरों से रहित है।

वस्तुतः राय जी का जीवन दर्शन नितान्त मौलिक दर्शन है साहित्यकार वहीं श्रेष्ठ होता है जो अनेक प्रभावों से प्रभावित होते हुए भी अपनी मौलिकता को अक्षुण्ण बनाए रख सके। राय जी इस दृष्टि से विशिष्ट है। डॉ. इन्द्रनाथ मदान ने लिखा है–"प्रगतिशील मनुष्य को समाज से अलग करके नहीं

RRIJM 2015, All Rights Reserved

देखता, वह मनुष्य और समाज के बींच और भी घनिष्ठ संबंध की कल्पना करता है। मनुष्य, मनुष्य का शोषण करने के लिए पैदा नहीं हुआ है बल्कि उसे ऐसा बना दिया गया है। दोनों में कोई प्राकृतिक विरोध नहीं है। इसके विपरीत उसका जीवन समाज के विकास पर आधारित है। साहित्य का कार्य एक विशेष युग में उत्पन्न विरोध को दूर करके, उन्हें परस्पर निकट ला देना है। इसलिए प्रगतिशील साहित्य कर्मशीलता के पथ पर ले आता है।"[4]

राय जी का जीवन प्रगतिशील विकासशीलता का परिचायक है। इनके जीवन दर्शन में आदर्श के यथार्थ की ओर अग्रसरित होने की प्रवृत्ति दिखाई देती है।

इस प्रकार हम देखते है कि राय जी ने मनुष्य को सहज रूप में देखने के विश्वासी है। व्यक्तिगत जीवन में भी उन्हें धन की परवाह नहीं रही। राय जी एक पुलिस अधिकारी के उच्च पद पर रहे उसके पश्चात् शिक्षा जगत् में अपना योगदान दिया। अतः उन्हें जीवन के सहज आदर्शों में गहरी आस्था है। राय जी जीवन को खेल की सी सहजता में जीने के समर्थक है। अतः हम कह सकते है कि राय जी के सभी उपन्यासों में यथार्थता भी है, अनुभूति की तरलता भी है किन्तु निमर्मता और क्रूर स्थितियों की सटीक और प्रभावी व्यंजना भी है।

हर युग की अपनी कालयुगीन परिस्थितियॉं होती है जिसमें पले महान प्रबुद्ध कलाकार या साहित्यकार अपने युग की ज्वलंत समस्याओं की कैसे अनदेखी कर सकता है। इस आलम में छाये धुंधलके को चीर कर एक सशक्त जीवन दर्शन की मशाल लेकर आगे बढ़ने का साहस मेधावी रचनाकार की लेखनी ही हो सकती है।

वर्तमान समाज में व्याप्त विभिन्न विसंगतियों ने मानवीय जीवन से सरोकार रखने वाले गुणों या तत्वों का हास कर दिया है जिससे सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक आदि पहलुओं को भी पथभ्रष्ट कर लोलुप्ता की सपेट में लिया है।

क्या ऐसे समय में अदम्य साहस रखने वाला साहित्यकार मौन धारण कर सकता है ? 28 नवम्बर, 1951 में जौनपुर (आजमगढ़) में जन्में विभूति नारायण राय ने इन विसंगतियों का पर्दा उठाने का प्रयास व दुस्साहस किया है जो कि एक विशिष्ट प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार है।

इन्होंने अपने लेखन में सरकारी तंत्र की विसंगतियों, राजनैतिक पद लोलुप्ता, साम्प्रदायिकता, मध्यम वर्गीय समाज की विडम्बनापूर्ण जीवन, स्थितियों का दारूण दस्तावेज आदि की अभिव्यंजना का चित्रण किया है।

क्षुब्ध होकर अपने रूह की आवाज अभिव्यक्त करते है क्योंकि ये आलम बड़ा अजीबोगरीब है–

"किसी की शबे वस्ल सोते कटे है,
किसी की शबे हिज्र रोते कटे है,
ये कैसी शब है या इलाही
जो न सोते कटे है न रोते कटे है।"[5]

बीसवीं शती के बीतने के साथ–साथ मानवीय मूल्यों में भी बदलाव आया है। जो कि मानवीय मूल्य के स्थान पर राग–द्वेष, ईर्ष्या, छलकपट के कारण मानवता का पतन हुआ है। जिसका अहम् पहलु है सत्ता या पद की लोलुप्ता।

फलस्वरूप राय जी ने वर्तमान के इस दौर में मानवता को उबारने का संकल्प अपने जेहन में अभी भी शेष है। जो अपनी लेखनी के माध्यम से उन्हें उकेरने की कोशिश की है।

"उसे भी बताना पड़ेगा कि इन गुंडों के आगे हमेशा समर्पण करने का ही नतीजा है कि दूसरे नेताओं के लिए बुथ कब्जा करते–करते अब ये गुंडे खुद ही एम.पी., एम.एल.ए. बनने लगे है।"[6]

"आजादी के बाद के राजनेताओं की पहली पीढ़ी आदर्शवाद के नशे से पूरी तरह गफिल (लापरवाह) नहीं हुई थी। उसके लिए अपराधियों से खुला संबंध रखने की कल्पना भी असंभव थी।"[7]

"भारतीय लोकतंत्र की अड़सठ वीं वर्षगांठ मन चुकी। इस दौर में क्या लोकतंत्र परिपक्व हुआ या बूढ़ा होकर जर्जर हो गया है ? यह सवाल नागरिकों को मथ रहा हैं।"[8]

अर्थात् वर्तमान समय में राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में देखे–सोचे तो अपने अकुंठ स्वार्थ के लिए साम्प्रदायिकता दंगे, जातिवाद, क्षैत्रियता, दहशत गर्दी आदि फैलाकर लोकतंत्र की सार्थकता पर लांछन लगा रहे है जिसके दल–दल में अबोध व निरीह जनता धंसती जा रही है। अतः राय जी ने अपनी पैनी, कुशाग्र बुद्धिमता से जनमानस को सचेत किया है।

"इस बार हिंसा और दरिंदगी अखबारों पन्नों से निकलकर मेरे अनुभव संसार का हिस्सा बनाने जा रही थी– एक ऐसा हिस्सा जो अगले कई सालों तक दुःस्वप्न की तरह मेरा पीछा नहीं छोड़ने वाला था।"[9]

"जिस तरह लड़की की जाति या धर्म के बारे में पूछना बेकार है उसी तरह उसके साथ बलात्कार करने वालों की जाति या धर्म जानने का कोई अर्थ नहीं है। अर्थ सिर्फ इस बात का है कि कर्फ्यू किसी भी जाति या धर्म की लड़की को जीवन के सबसे कोमल अनुभव से वंचित कर सकता है। उस मोहल्ले में सभी कायर बसे थे जिन्होंने लड़की को दरिन्दों द्वारा अन्दर खींचे जाते देखा और दरारे चूपचाप मूंद ली।"[10]

इन सवालों के अलावा हमारे जेहन में कई और सवाल भी उठना स्वाभाविक है। यह सोचने का विषय हैं। फिर भी हम इन प्रश्नों में उलझे बगैर– "कि देश का विभाजन किसने कराया। विभाजन एक बड़ी गलती भी और उसका बड़ा खामियाजा हमने भूगता है। समय आ गया है जब सभी इस उपमहाद्वीप के लोग बैठे और इससे जुडे प्रश्नों पर गंभीरता से विचार करें।"[11]

साम्प्रदायिकता के इन झमेले से बाहर निकलकर हमें धर्म–निरपेक्षता को एक विश्वास की तरह स्वीकार की जानी चाहिए किसी फौरी–नीति की तरह नहीं। राजतंत्र में धर्म निरपेक्षता की लड़ाई खानों में बंटकर नहीं बल्कि मिलकर लड़ी जा सकती है।

इस ओर इंगित करती हुई डॉ. रमणिका गुप्ता ने वर्तमान की दशा के बारे में लिखा है–

"मोहल्ले में आग लगी है,
हम बहस कर रहे है
भीड़ दरवाजा पीट रही है,
कर्फ्यू लगने ही वाला है।
गुंडे घेर रहे है घर,
दरवाजा बंद है।"[12]

कुछ ऐसी ही गुंज राय जी के 'घर' उपन्यास में हैं। जो कि मानवीय संवेदाहीन पक्षों को उजागर करती है। जो आज के पारिवारिक परिप्रेक्ष्य से सरोकार रखने में लेखक की चिन्तन दृष्टि उद्घाटित करती है जो उन गरीब परिवार, युवा बेरोजगारी का दंश झेलने वाले युवकों का दस्तावेज है जो एक ही घर में रहते हुए एक–दूसरे से कटकर, संवादहीनता की अंधी सुरंग में क्यों फंस गए जहां न परिचित का स्पर्श था और न ही स्वर ? इन सवालों के जवाब के अलावा यह हमारी व्यवस्थाओं और विद्रुपताओं की कहानी है जिनमें फंसकर एक पढ़ा लिख नवयुवक बेरोजगारी का दंश झेलते हुए नपुंसक आक्रोश से भर उठता है और स्वयं समाज व परिवार से आंखे चुराने लगता है, दूसरी तरफ यह उन हजारों राजकुमात्यिों के करूण दुख की कथा (दहेज प्रथा) भी है। जिन्हें कोई राजकुमार लेने नहीं आता। ऐसे ही बेरोजगारी झेलते परिवार का चित्रण राय जी ने दिया है–

"ऐसे कैसे हुआ ? आखिर क्यों, एक भरा पूरा घर सिर्फ ईंट–गारे के मकान में तब्दील होकर रह गया ? घर शब्द से जुड़ी उष्मा एकाएक कैसे वाष्प बनकर उड़ गई। जाहिर है इन सवाल का जवाब यह निर्जिव मकान नहीं हो पाएगा।"[13]

बेरोजगारी के अलावा चुनावी रंग के रायजी ने अपने व्यंग्य संग्रह 'एक छात्र नेता का रोजनामचा' में भी विश्वविद्यालय चुनाव प्रणाली का वर्णन किया है–

"विश्वविद्यालय में दिग्विजय करने के बाद, वह अध्यापक की कॉलोनी की ओर दिग्विजय करने निकला। दो तीन अध्यापकों ने पिछले साल उससे पेंपलेट निकलवाए थे और एतदर्थ चुनाव में मदद करने के लिए कहा था वह कई मकानों में खाली जेब घुसा और भरी जेब वापस लेकर लौटा। डीन साहब ने उसे अपने मित्र की गाड़ी चुनाव प्रचार में उपलब्ध करा देने का वादा किया और कुछ धन देकर उसे विदा किया।"[14]

दूसरी ओर सरकारी तंत्र की ओर दृष्टि करें तो बहु राष्ट्रीय निगमों की बढ़ती मौजूदगी और कॉरपोरेट दुनिया में कार्य संस्कृति पर लगातार एक नैतिक मूल्य के रूप में जोर दिए जाने के बावजूद भारतीय मध्यम वर्ग की पहली पसंद आज भी सरकारी नौकरी ही है। भला क्यों ? तो उसका संबंध उस आनंद से ही है जो गैर जिम्मेदारी, काहिली, अंकुठस्वार्थ और भ्रष्टाचार से मिलता है और हमारे स्वाधीनता के 68 (अड़सठ) सालों में सरकारी नौकरी इन सब गुणों का पर्याय बनकर उभरी है। इन्हीं सवालों के चलते 'तबादला उद्योग' वजूद में आया जो आज दफ्तर से लेकर राजनेताओं के बंगले तक शायद बाकी उद्योगों से ज्यादा फल–फूल रहा है।

"तबादले और लाइसेंस राजधानी के साहित्य और संस्कृति थे। राजनेताओं के घरों, दलालों के ठिकानों, पार्टी दफ्तरों और सचिवालयों के कक्षों चौबीस घंटे इन्हीं पर गोष्ठियाँ होती थी। राजनीति दलों के घोषणा पत्रों में बड़ी–बड़ी बातें लिखी जाती थी, पर उनके कार्यकर्ता जानते थे कि लिखी बातें प्रमाण नहीं होती। चुनाव खत्म होते ही चौराहों पर गाय घोषणा पत्रों को खाती दिखाई पड़ने लगती थीं। नेता लोग वापस तबादला और लाइसेंस उद्योग में लग जाते और जो नेता अधिक तबादले करा सकता या लाइसेंस दिला सकता उसी नेता के यहां आजकल सबसे अधिक भीड़ लग रही थीं क्योंकि आजकल सबसे अधिक तबादला वहीं करा रही (सुमन) रही थी।[15]

"राजधानी में कोई सुन्दर महिला अगर महत्वाकांक्षी भी हो तो सीधे राजनीति की तरफ भागती है।" और "जो उस समय सुन्दर और महत्वाकांक्षी दोनों थी।"[16]

इसके अलावा शिक्षा की दुनिया भी बदल रही है। इससे जुड़े सवालों से हम साक्षात्कार हो रहे है जो कि आये दिन अखबारों में शिक्षा व्यापार के दलालों के गिरोहों का भंडाभोड़ हो रहा है।[17]

"शिक्षा की दुनिया बदल रही थी और उससे जुड़े गुरू बदल रहे थे अब गुरू राजपुत्रों को दौड़ जिताने के लिए निर्धन शिष्यों के अंगुठे नहीं करवाते थे वे धनिक पुत्रों से वाजिब फीस लेकर उन्हें दौड़ शुरू होने के पहले ही आगे कर देते थे। प्रधानाध्यापकों और कॉलेलों के मैनेजरों ने नकल को एक व्यवस्थित रोजगार का रूप दे दिया था। हर चीज के रेट निर्धारित हो गए थे। यदि अपने तयशुदा कक्ष में नकल करनी थी तो उसकी एक कीमत थी, किसी अलग कमरे में बैठकर सहायक की मदद से उत्तर पुस्तिका लिखनी थी तो उसकी दूसरी कीमत थी, किसी दूसरे को बैठाकर उससे उत्तर लिखवाने की कीमत अलग थी और अगर कोई छात्र चाहता कि विषयाध्यापक ही उसके पास खड़ा होकर इमला दे तो इसकी फीस सबसे भिन्न थी।[18] दूसरी और शिक्षकों के कार्य पद्धति पर सवालिया निशान लग रहे है–

"शास्त्री जी है जो आधा समय लखनऊ गुजारते है और आधा समय स्थानीय नेताओं की आवभगत करते है कॉलेज की युनियन क्या है ? राजनीतिक का एक अखाड़ा है। प्रोफेसर है, मुश्किल से एक सप्ताह से डेढ़ क्लास लेते है।"[19]

इसके अलावा शिक्षण संस्थाओं की लापरवाही व मूल्यांकन पद्धति पर त्यागी जी के व्यंग्य–

"एक राज्य तो इतना विकासशील निकला कि वहां कॉपियां देखे बगैर ही छात्रों को पास कर दिया गया। कॉपियां बटोरने कोई स्टेशन गया ही नहीं। स्थिति यह रही कि एक ओर तो रेल्वे विभाग उन सारी उत्तर पुस्तिकाओं को बतौर रद्दी के नीलाम करता रहा और दूसरी ओर विद्यार्थी लोग उन कॉपियों की जांच के बिना ही उत्तीर्ण या अनुत्तीर्ण होते रहे है।"[20]

निष्कर्ष–

इस तरह जगत् गुझ की शिक्षण व्यवस्थाऐं किस ओर जा रही है यह मंथन का विषय है। इस निमित्त सकारात्मक रवैया अपनाना होगा न कि बेलगाम हड़ताले, तोड़फाड़ करना। इससे तो आमजन के साथ–साथ स्वयं ही युवागण के लिए मकड़जाल से निकलना नामुमकीन सा प्रतीत होता है तथा अधिकाधिक पथभ्रष्ट हो जा रहे है और सफेदफोस, गुंडे, चतुर लोग पतली गली से आगे बढ़ रहे। गरीब तबका पीछे धकेला जा रहा। ये अपना स्वार्थ सिद्ध कर रहे जबकि सरकारी तंत्र व अफसरों के कानों जूं तक नहीं रेंगती है। अतः हमें मिलकर ऐसी ताकतों से लड़ना होगा जिससे ये विसंगतियॉ मिट सके और देश के विकास में हर दृष्टि से सहभागी बनना होगा।

संदर्भ सूची

1. बालकृष्ण शर्मा नवीन : व्यक्ति एवं काव्य, पृ. 124
2. शैल रस्तोगी : प्रेमचन्द्र और उनका गोदान, पृ. 123
3. शैल रस्तोगी : प्रेमचन्द्र और उनका गोदान, पृ. 123
4. शैल रस्तोगी : प्रेमचन्द्र और उनका गोदान, पृ. 128
5. विभूति नारायण राय, शहर में कर्फ्यू, वाणी प्रकाशन, 4695, 21ए, दरियागंज, नई दिल्ली, पृ. 68
6. विभूति नारायण राय, किस्सा लोकतंत्र, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि. जगेतपुरी, नई दिल्ली, पृ. 151
7. विभूति नारायण राय, किस्सा लोकतंत्र, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि. जगेतपुरी, नई दिल्ली, पृ. 115
8. विभूति नारायण राय, किस्सा लोकतंत्र, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि. जगेतपुरी, नई दिल्ली, पृ. 1
9. विभूति नारायण राय, शहर में कर्फ्यू, वाणी प्रकाशन, 4695, 21ए, दरियागंज, नई दिल्ली, पृ. 7
10. विभूति नारायण राय, शहर में कर्फ्यू, वाणी प्रकाशन, 4695, 21ए, दरियागंज, नई दिल्ली, पृ. 66
11. विभूति नारायण राय, शहर में कर्फ्यू, वाणी प्रकाशन, 4695, 21ए, दरियागंज, नई दिल्ली, पृ. 12
12. रमणिका गुप्ता, कैसे करोंगे बंटवारा इतिहास का, पृ. 51
13. विभूति नारायण राय, घर, वाणी प्रकाशन, 4695, 21ए, दरियागंज, नई दिल्ली, पृ. 95
14. विभूति नारायण राय, एक छात्र नेता का रोजनामचा–व्यंग्य, शिल्पायन 10295, लेन नं. 1, वेस्ट गोरखपार्क–शाहदरा, दिल्ली, पृ. 1–4
15. विभूति नारायण राय, तबादला, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि. जगेतपुरी, नई दिल्ली, पृ. 130
16. विभूति नारायण राय, तबादला, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि. जगेतपुरी, नई दिल्ली, पृ. 122
17. विभूति नारायण राय, तबादला, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि. जगेतपुरी, नई दिल्ली, पृ. 122
18. विभूति नारायण राय, तबादला, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि. जगेतपुरी, नई दिल्ली, पृ. 11
19. रवीन्द्रनाथ त्यागी, इतिहास का शव–व्यंग्य, संपादक–कमल किशोर, गोयनका पेज नं. 12, संस्करण 1987, पराग प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 167
20. रवीन्द्रनाथ त्यागी, प्रतिनिधि व्यंग्य, संपादक–कमल किशोर, गोयनका पेज नं. 12, संस्करण 1987, पराग प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 104

RRIJM 2015, All Rights Reserved